



THE TIMES OF INDIA

Date: 02-11-17

How to break into the top 50

Enhance jobs and GDP growth by further improving ease of doing business and slashing red tape

Amitabh Kant



Three years back in his very first interaction with Secretaries, Prime Minister Narendra Modi had expressed his anguish at India's poor performance in World Bank's Ease of Doing Business. His view was that India has made itself a highly complex, difficult and complicated place to do business in and it was necessary that rules, regulations and procedures built over the years are dismantled so that India becomes easy for investors. In the last three years this work has been undertaken with single minded pursuit, structural reforms vigorously driven, procedures simplified, rules modified and almost 1200 laws

abolished. The measures put together have been unprecedented.

In the last three years India's Ease of Doing Business rank has jumped up from 142 to 100 – a jump of 42 positions. The World Bank's ranking is important as it is widely publicised and plays a significant role in positioning and branding a nation. India is a very large country, and much of the action relating to investments has shifted to states. It is therefore necessary that we make states easy and simple to do business in. Government has initiated competition amongst states and union territories on defined outcomes of Ease of Doing Business.

There has been heavy competition. In the first year Gujarat came number one. The second year, Telangana and Andhra Pradesh beat Gujarat for the first spot. The best thing was that the mineral rich states of Jharkhand and Chhattisgarh competed heavily and came fourth and fifth. Competition amongst states has now become intense. Since ranking was being put in public domain there was heavy pressure on chief ministers and state bureaucracy to perform and deliver. Clearly good governance is now becoming good politics. Learning from this example, NITI Aayog has carried this principle forward for state rankings on defined outcomes in the field of health, education and composite water management. While we have challenged the states, we are also partnering them to radically improve their performance before ranks are announced. This in many ways has been a unique experience of competitive federalism.

India making a substantial jump of 30 ranks is extremely noteworthy as it is very rare and difficult for large countries to make a quantum jump. A jump of 30 ranks has rarely been seen before. However India needs to radically improve in dealing with construction permits where it ranks 181, enforcement of

contracts where it is ranked 164, starting a business where it is 156, trading across borders where it is 146 and registering property where it is still at 154. What does India need to do improve its position in these parameters and break into the top 50 in the next two years? In registering property the critical challenge is that records related to land are spread across many departments, sub-registrar's office, land records, banks for mortgages and courts in cases of disputes. This means that a buyer must visit every single department separately to find the records. Therefore reducing the search time will require massive digitisation at various offices and linking records together using a unique ID.

In enforcement of contracts the establishment of dedicated commercial courts at the district court level in Delhi and Mumbai can go a long way towards reducing time taken for resolving commercial disputes. These courts should also introduce online electronic case management systems and should rigorously abide by the civil procedure code limit of a maximum of three adjournments per case. Despite important reforms in starting a business India continues to be ranked poorly because other countries have reformed faster. India's rank can benefit from further integrating registration processes into a single form by converging GST with PAN/TAN registration, integrating EPFO and ESIC and also shops and establishment registration processes. It also needs business process re-engineering to reduce the propensity to inspect by switching to real time registration and a culture of risk-based verifications. This requires cutting layers of bureaucracy.

In trading across borders, India has implemented far reaching reforms but private sector feedback seems to indicate that the impact is still to be felt. We need to do extensive process re-engineering to ensure that all approving authorities in the customs clearance process deliver seamless online approvals and bring shipping lines on board to deliver timely online service. While reforms in dealing with construction permits have been acknowledged there is scope for greater improvement. Further reforms require integration of central and state governments' NOC departments with the municipal corporation, single windows to ensure online approvals and service delivery, using GIS to provide transparent and conclusive information on permissions required and risk based principles to reduce the number of inspection and approvals.

Lastly, we need to train staff in all our departments so that they become champions of reforms and provide correct advice to applicants. India must continue to accelerate the momentum of reforms in the coming years. It has demonstrated the political will for structural reforms and the ability to converge and integrate across departments. Providing greater vigour, energy and dynamism to this movement will enable India to definitely break into the top 50 in the next two years. There will be many challenges. Bureaucracy must continue to be an active agent of process re-engineering, hard reforms must be pushed vigorously, administrative blocks eliminated and silos broken down. India's ambition must be to become the easiest and simplest place for investors to do business in.

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 02-11-17

कृषि निर्यात को गति

संपादकीय

कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा) ने कृषि निर्यात बढ़ाने संबंधी मसौदा नीति सार्वजनिक चर्चा के लिए प्रस्तुत की है। यह नीति एकदम सही समय पर आई है क्योंकि बीते तीन वर्ष में कृषि निर्यात लगातार कम हुआ है। वर्ष 2013-14 के 42.9 अरब डॉलर से घटकर यह वर्ष 2016-17 में 33.4 अरब डॉलर रह गया। इस गिरावट को रोकना आवश्यक है। यह रुख चिंतित करने वाला है क्योंकि कृषि जिंसों के मामले में भारत घाटे से अधिशेष वाला देश बन चुका है और उसे अपनी अतिरिक्त उपज के लिए नए बाजारों की आवश्यकता है। कमजोर घरेलू कीमतों और किसानों की बढ़ती निराशा के बीच निर्यात के ठिकानों की सख्त आवश्यकता है। हाल के दिनों में बंपर पैदावार के बाद किसानों को फसलों के उचित दाम नहीं मिले, इससे भी निर्यात बढ़ाने की जरूरत उजागर होती है। इसके अतिरिक्त निर्यात कृषि उपज का प्रतिफल बढ़ाने का सबसे सहज माध्यम है। इतना ही नहीं इससे सरकार के सन 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने के प्रयासों को भी सहायता मिलेगी।

मौजूदा कमजोर स्तर पर भी निर्यात कृषि क्षेत्र के सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 13 फीसदी का योगदान कर रहा है। निर्यात बढ़ने से कृषि क्षेत्र में मजबूती ही नहीं आएगी बल्कि अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक असर भी होगा। कृषि निर्यात में गिरावट सरकार की कृषि संबंधी विदेश व्यापार नीतियों में अस्थिरता की वजह से आई है। निर्यात पर अक्सर प्रतिबंध लगाए जाते रहे हैं, निर्यात शुल्क और न्यूनतम समर्थन मूल्य ऐसे नहीं हैं कि एक स्थिर निर्यात बाजार तैयार किया जा सके। चावल, गेहूं और चीनी जैसी थोक निर्यात वाली जिंस ऐसी ही नीतियों की शिकार हैं। इससे भारत की भरोसेमंद निर्यातक की छवि को भी धक्का पहुंचता है और विदेशी खरीदार नियमित आपूर्ति के लिए दूसरे देशों का रुख करते हैं। आश्चर्य नहीं कि अनेक प्रतिस्पर्धी मूल्य वाली कृषि जिंसों में दुनिया का अग्रणी उत्पादक होने के बावजूद वैश्विक कृषि व्यापार में भारत की हिस्सेदारी महज 2.4 फीसदी है। ऐसी जमीनी हकीकत के साथ एपीडा ने स्थिर कृषि निर्यात नीति की बात कहकर बेहतर काम किया है। उसने यह भी कहा है कि हर वर्ष कम से कम 10 से 20 फीसदी घरेलू उपज का निर्यात किया जाए।

कृषि निर्यात का यह स्तर कड़ी मशक्कत की मांग करता है। इस काम का एक हिस्सा एपीडा स्वयं संभालेगा परंतु कई अन्य क्षेत्रों को निजी क्षेत्र को सरकारी मदद इस प्रक्रिया का अहम हिस्सा है। इसमें फसल कटाई के बाद की मूल्य शृंखला, खराब होने वाली उपज के लिए संग्रहण केंद्र, गुणवत्ता जांच की प्रयोगशालाएं, शीत गृह, ठंडी अवस्था में माल ढुलाई, ढुलाई के पहले साफ-सफाई, ग्रेडिंग और प्राथमिक गुणवत्ता बरकरार रखने संबंधी उपचार के लिए पैक हाउस की स्थापना तथा निर्यात होने वाले माल की पैकेजिंग आदि की व्यवस्था शामिल हैं। इसमें दो राय नहीं कि शीत गृहों के निर्माण की दिशा में कुछ प्रगति हुई है लेकिन अभी भी उनकी तादाद 4.2 करोड़ शीतगृहों की वास्तविक आवश्यकता से काफी कम है। इसी तरह फिलहाल देश में 250 पैक हाउस हैं जबकि जरूरत 70,000 की है। केंद्र और राज्य सरकारों को किसानों, पशुपालकों और मछुआरों को शिक्षित बनाना होगा ताकि वे कीटनाशकों और एंटीबायोटिक का उचित इस्तेमाल करके अपनी उपज को इनके घातक असर से बचाएं। इनकी अधिकता के चलते कई बार निर्यात रद्द करना पड़ता है। एपीडा ने खराब होने वाली निर्यातान्मुखी सामग्री के हवाई परिवहन पर वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) की दर को मौजूदा 18 फीसदी से कम कर 5 फीसदी करने की मांग की है। इस पर भी विचार होना चाहिए। जब तक इन मुद्दों को हल नहीं किया जाता, कृषि निर्यात प्रभावित होता रहेगा।

नईदुनिया

Date: 02-11-17

विशेष अदालतों की दरकार

संपादकीय



यह अच्छा हुआ कि सुप्रीम कोर्ट इस नतीजे पर पहुंचा कि सांसदों और विधायकों के आपराधिक मामलों की सुनवाई के लिए विशेष व्यवस्था करने की आवश्यकता है। बेहतर होता कि सुप्रीम कोर्ट 2014 में तभी इस नतीजे पर पहुंच जाता, जब मोदी सरकार ने सांसदों और विधायकों के आपराधिक मामलों की सुनवाई एक निश्चित समयसीमा में किए जाने की जरूरत जताई थी। कम से कम अब तो यह सुनिश्चित किया ही जाना चाहिए कि दागी जनप्रतिनिधियों के मामलों के निपटारे के लिए विशेष

अदालतों का गठन तय समय में हो और वे सभी संसाधनों से भी लैस हों। जितना जरूरी यह है कि ऐसी विशेष अदालतें गठित हों, उतना ही यह भी कि वे नेताओं के मामलों का तेजी से निस्तारण करती भी हुई दिखें। यह अपेक्षा इसलिए, क्योंकि कई बार फास्ट ट्रैक अथवा विशेष अदालतों का कामकाज भी सुस्त गति से आगे बढ़ता दिखता है। यदि विशेष अदालतें भी तारीख-पर-तारीख के सिलसिले से दो-चार होती रहती हैं या फिर संबंधित नेता किसी न किसी बहाने अपने मामलों की सुनवाई में अड़ंगा डालने में सफल होते रहते हैं तो फिर उनके गठन का उद्देश्य ही पराजित हो जाएगा। ऐसा किसी भी कीमत पर नहीं होने दिया जाना चाहिए। सरकार और साथ ही सुप्रीम कोर्ट को अपने-अपने स्तर पर यह देखना होगा कि दागी जनप्रतिनिधियों के मामलों का निस्तारण करने वाली विशेष अदालतें प्रभावी साबित हों।

नेताओं के आपराधिक मामलों के निस्तारण के लिए विशेष अदालतों के गठन को लेकर ऐसे सवाल उठ सकते हैं कि आखिर दागी जनप्रतिनिधियों के लिए अतिरिक्त उपाय क्यों? ऐसे सवालों का एक सीधा-सरल जवाब तो यही है कि किसी भी लोकतंत्र के लिए यह शुभ नहीं कि गंभीर आरोपों से घिरे जनप्रतिनिधि विधानमंडलों की शोभा बढ़ाएं। इसके अतिरिक्त इसकी भी अनदेखी नहीं की जा सकती कि जब बड़ी संख्या में जनप्रतिनिधि संगीन आरोपों से घिरे होने के बावजूद सार्वजनिक जीवन में सक्रिय बने रहते हैं तो फिर कानून के शासन के प्रति आम आदमी की आस्था डिगती है। दागी जनप्रतिनिधियों की संख्या बढ़ते चले जाने से न केवल विधि के शासन का उपहास उड़ता है, बल्कि राजनीति के अपराधीकरण को बल भी मिलता है। यह किसी से छिपा नहीं कि निचली अदालतों से सजा पाए जनप्रतिनिधि भी इस अवधारणा का इस्तेमाल एक आवरण की तरह करते हैं कि दोषी साबित न होने तक वे निर्दोष हैं। स्थिति कितनी गंभीर है, यह इस तथ्य से समझा जा सकता है कि 2014 में आपराधिक मामलों का सामना कर रहे सांसदों और विधायकों की संख्या 1581 थी। हालांकि फिलहाल सरकार के पास इस बारे में कोई जानकारी नहीं कि बीते तीन-साढ़े तीन साल में इनमें से कितनों के मामले का निस्तारण हुआ, लेकिन अंदेशा यही है कि ऐसे मामले मामूली ही होंगे। इस अंदेशे की एक

बड़ी वजह यह है कि अपने देश में रसूख वाले लोग खुद से जुड़े मामलों की सुनवाई को बाधित करने में बड़ी आसानी से सफल रहते हैं। यह किसी से छिपा नहीं कि कई बार ऐसे मामलों की सही तरह से सुनवाई तब हो पाती है, जब उनका स्थानांतरण किसी अन्य जिले या राज्य में करना पड़ता है।



Date: 02-11-17

कारोबारी माहौल

मुख्य संपादकीय

कारोबार करने की दृष्टि से सुगम वातावरण वाले देशों की सूची में एक साथ 30 पायदान की छलांग एक बड़ी उपलब्धि है। इस उपलब्धि ने इस बात को नए सिरे से स्पष्ट किया कि प्रधानमंत्री अपने उस आश्वासन के प्रति गंभीर हैं जिसके तहत उन्होंने कहा था कि वह भारत को सुगम कारोबार वाले देशों की सूची में पहले 50 स्थान के भीतर लाना चाहते हैं, लेकिन केवल यही पर्याप्त नहीं है कि विश्व बैंक की सूची में भारत और ऊपर नजर आए। इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि विदेशी निवेश बढ़ने के साथ ही कारोबारी गतिविधियां भी तेज होती हुई दिखें। ध्यान रहे कि भारत उद्योगीकरण के मामले में अपनी तमाम क्षमता के बाद भी कहीं पीछे है। कायदे से आज भारत का कारोबारी माहौल वैसे ही दिखना चाहिए था जैसा दक्षिण कोरिया, चीन के साथ ही कई अन्य एशियाई देशों में नजर आता है। यह एक विडंबना ही है कि कारोबारी माहौल में उल्लेखनीय सुधार दर्शाने वाली रैंकिंग एक ऐसे समय आई है जब देश का उद्योग-व्यापार जगत जीएसटी के जटिल तौर-तरीकों से परेशान है। निःसंदेह ये जटिल तौर-तरीके उस नौकरशाही की देन हैं जो उद्योग-व्यापार जगत को संदेह की निगाह से देखती है। शायद जीएसटी जटिल तौर-तरीकों का पर्याय इसीलिए बना, क्योंकि नौकरशाह इस सोच के तहत काम कर रहे थे कि व्यापारियों को किसी तरह कहीं से बच निकलने का अवसर न मिले। सच्चाई जो भी हो, यह सवाल उठना ही चाहिए कि कारोबारी माहौल सुगम होते जाने के इस दौर में जीएसटी इतने जटिल रूप में क्यों सामने आया और इसके लिए कौन जिम्मेदार है? क्या इन जिम्मेदार लोगों को जवाबदेह बनाया जाएगा?

यह ठीक नहीं कि प्रधानमंत्री तो यह कहते रहें कि सरकार को अपने नागरिकों पर भरोसा करना चाहिए, लेकिन उनके नौकरशाह ऐसी तरकीबें निकालते रहें कि लोगों को कदम-कदम पर अड़चनों का सामना करना पड़े। यह उनकी ऐसी ही तरकीबों का नतीजा है कि कथित तौर पर सरल कहे जाने वाले दस्तावेज भी कठिन ही बने रहते हैं। सुगम होते कारोबारी माहौल के वांछित नतीजे हासिल करने के लिए यह आवश्यक है कि सरकार नौकरशाही के रुख-रवैये में बदलाव सुनिश्चित करे। इस बदलाव की जरूरत केंद्रीय स्तर की नौकरशाही में भी है और राज्यों के स्तर की नौकरशाही में भी। यह एक तथ्य है कि राज्यों के स्तर पर बदलाव की गति अभी भी धीमी है। यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि कारोबारी माहौल सहूलियत भरा दिखने और होने में अंतर होता है। कई बार कागजों पर जो चीजें आसान नजर आती हैं वे धरातल पर मुश्किल ही होती हैं। अब जब प्रधानमंत्री की प्रतिबद्धता के चलते यह स्पष्ट है कि आने वाले समय में

कारोबारी माहौल में और अधिक सुधार देखने को मिल सकता है तब फिर यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि उद्योग-व्यापार जगत भी छलांग लगाता हुआ दिखे। यह सुनिश्चित करना इसलिए आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है, क्योंकि रोजगार के अवसर बढ़ाने की सख्त जरूरत है। इस जरूरत की पूर्ति तभी होगी जब छोटे-बड़े सभी तरह के उद्योगों को बल मिलेगा। दरअसल यह बल ही कारोबारी माहौल के सुगम होने का प्रमाण साबित होगा।

राष्ट्रीय
सहारा

Date: 01-11-17

मदरसा का आधुनिकीकरण

उत्तर प्रदेश के ढाई हजार से ज्यादा मदरसों में अब मजहमी किताबों के साथ-साथ राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद यानी एनसीईआरटी की पुस्तकें भी दिखाई देंगी। योगी आदित्यानाथ की सरकार ने यह फैसला मदरसों में पाठ्यक्रमों को सुधारने के लिए बनी 40 सदस्यीय समिति की रिपोर्ट पर विचार करने के बाद यह निर्णय लिया है। आमतौर पर मदरसों को लेकर आमजनों में यह भ्रान्ति है कि यहां सिर्फ मजहबी शिक्षा दी जाती है। और ऐसे केंद्र से निकले बच्चे मामूली ज्ञान अर्जित करते हैं, जिससे आगे चलकर उनके लिए रोजगार का गंभीर संकट पैदा हो जाता है। सरकार की असली चिंता इसी बात को लेकर है कि मदरसों की शिक्षा देने की पद्धति में बदलाव आए। वह भी समय के साथ चलें। आज जो हालात हैं, वह चिंताजनक इसीलिए हैं कि मदरसों ने खुद को मध्ययुगीन खांचे से बाहर निकलने की नहीं सोची। यहां अभी अंधेरा है, जड़ता है। राज्य सरकार की पहल इस मायने में प्रशंसनीय और साहसिक कही जाएगी। सरकार इस बात का महत्व समझती है कि मदरसा शिक्षा को आधुनिक और पारदर्शी बनाना बेहद कितना जरूरी है? चुनांचे मदरसों में अब आलिम की पढ़ाई से कहीं ज्यादा जोर एनसीईआरटी की शिक्षा पद्धति पर होगा। यह आवश्यक भी है। क्योंकि सिर्फ आधुनिक शिक्षा के जरिये ही समाज और व्यक्ति में विकास संभव है। ऐसे फैसले से निःसंदेह मुस्लिम समाज को बदलते वक्त के साथ खुद को बदलने का हौसला मिलेगा और वह तेजी से तरक्की की सीढ़ियां चढ़ेगी। जिस पिछड़ेपन और दकियानूसी सोच के आरोप से मुस्लिम तबका दो-चार होता है, उससे भी पीछा छूटेगा। सबसे अहम बात यह कि छात्रों के सामाजिक सरोकार बढ़ेंगे। रोजगारपरक शिक्षा मिलेगी तो बेरोजगारी का संकट भी काफूर होगा। मोहम्मद साहब का कहना है कि, पालने से कब्र तक ज्ञान प्राप्त करते रहो। इसके बावजूद शिक्षा के मामले में पिछड़ापन चिंता का सबब है। योगी सरकार ने इन्हीं सब चिंताओं को समझते हुए इस साल यूपी बोर्ड ऑफ मदरसा एजुकेशन नाम से एक वेबसाइट लांच की थी। उसके बाद एनसीईआरटी की किताबों से पढ़ाई का फलसफा कहीं-न-कहीं भाजपा सरकार के “सबका साथ सबका विकास” के विजन को ही सार्थक करेगा। मगर सबकुछ तभी फलीभूत होगा जब सरकार की सोच ईमानदार और पाकसाफ होगी।

Date: 01-11-17

भ्रष्टाचार पर अंकुश कब?

एस. गुरुमूर्ति, विचारक

भारतीय लोग होब्स विचारधारा वाले हैं (सिर्फ अनियंत्रित असभ्य स्वार्थ की संस्कृति वाले) भारत में भ्रष्टाचार का एक सांस्कृतिक पहलू है। भारतीय भ्रष्टाचार में बिल्कुल असहज नहीं होते, भ्रष्टाचार यहां बेहद व्यापक है। भारतीय भ्रष्ट व्यक्ति का विरोध करने के बजाय उसे सहन करते हैं। कोई भी नस्ल इतनी जन्मजात भ्रष्ट नहीं होती यह जानने के लिए कि भारतीय इतने भ्रष्ट क्यों होते हैं, उनकी जीवन पद्धति और परम्पराएं देखिए। भारत में धर्म लेनदेन सरीखे व्यवसाय जैसा है। भारतीय लोग भगवान को भी पैसा देते हैं। इस उम्मीद में कि वो बदले में दूसरों की तुलना में उन्हें वरीयता देकर फल देंगे। ये तर्क इस बात को दिमाग में बिठाते हैं कि अयोग्य लोगों को इच्छित चीज पाने के लिए कुछ देना पड़ता है। मंदिर की चहारदीवारी के बाहर हम इसी लेनदेन को भ्रष्टाचार कहते हैं। धनी भारतीय कैश के बजाय स्वर्ण और अन्य आभूषण आदि देता है। वो अपने गिफ्ट गरीब को नहीं देता, भगवान को देता है। वो सोचता है कि किसी जरूरतमंद को देने से धन बरबाद होता है। जून, 2009 में “द हिन्दू” ने कर्नाटक के मंत्री जी. जनार्दन रेड्डी द्वारा स्वर्ण और हीरों के 45 करोड़ मूल्य के आभूषण तिरु पति मंदिर में चढ़ाने की खबर छापी थी। भारत के मंदिर इतना ज्यादा धन प्राप्त कर लेते हैं कि वो यह भी नहीं जानते कि इसका करें क्या? अरबों की सम्पत्ति मंदिरों में व्यर्थ पड़ी है। जब यूरोपियन इंडिया आएतो उन्होंने यहां स्कूल बनवाए। जब भारतीय यूरोप और अमेरिका जाते हैं, तो वो वहां मंदिर बनाते हैं। भारतीयों को लगता है कि अगर भगवान कुछ देने के लिए धन चाहते हैं, तो फिर वही काम करने में कुछ गलत नहीं है। इसीलिए भारतीय इतनी आसानी से भ्रष्ट बन जाते हैं। भारतीय कल्चर इसीलिए इस तरह के व्यवहार को आसानी से आत्मसात कर लेती है, क्योंकि नैतिक तौर पर इसमें कोई नैतिक दाग नहीं आता। एक अति भ्रष्ट नेता जयललिता दोबारा सत्ता में आ जाती हैं, जो आप पश्चिमी देशों में सोच भी नहीं सकते। भारतीयों की भ्रष्टाचार के प्रति संशयात्मक स्थिति इतिहास में स्पष्ट है। भारतीय इतिहास बताता है कि कई शहर और राजधानियों को रक्षकों को गेट खोलने के लिए और कमांडरों को सरेंडर करने के लिए घूस देकर जीता गया। यह सिर्फ भारत में है। भारतीयों के भ्रष्ट चरित्र का परिणाम है कि भारतीय उपमहाद्वीप में बेहद सीमित युद्ध हुए। यह चकित करने वाला है कि भारतीयों ने प्राचीन यूनान और मॉडर्न यूरोप की तुलना में कितने कम युद्ध लड़े। नादिरशाह का तुकरे से युद्ध तो बेहद तीव्र और अंतिम सांस तक लड़ा गया था।

भारत में तो युद्ध की जरूरत ही नहीं थी, घूस देना ही सेना को रास्ते से हटाने के लिए काफी था। कोई भी आक्रमणकारी, जो पैसे खर्च करना चाहे भारतीय राजा को चाहे उसकी सेना में लाखों सैनिक हों, हटा सकता था। प्लासी के युद्ध में भी भारतीय सैनिकों ने मुश्किल से कोई मुकाबला किया। क्लाइव ने मीर जाफर को पैसे दिए और पूरी बंगाल सेना 3000 में सिमट गई। भारतीय किलों को जीतने में हमेशा पैसों के लेन देन का प्रयोग हुआ। गोलकुंडा का किला 1687 में पीछे का गुप्त द्वार खुलवा कर जीता गया। मुगलों ने मराठों और राजपूतों को मूलतः रिश्वत से जीता। श्रीनगर के राजा ने दारा के पुत्र सुलेमान को औरंगजेब को पैसे के बदले सौंप दिया। ऐसे कई मामले हैं जहां भारतीयों ने सिर्फ रिश्वत के लिए बड़े पैमाने पर गद्दारी की। सवाल है कि भारतीयों में सौदेबाजी का ऐसा कल्चर क्यों है जबकि जहां तमाम सभ्य देशों में सौदेबाजी का यह कल्चर नहीं है। भारतीय इस सिद्धांत में विास नहीं करते कि यदि वो सब नैतिक रूप से व्यवहार करेंगे तो सभी तरक्की करेंगे क्योंकि उनका “विास/धर्म” यह शिक्षा नहीं देता। उनका कास्ट सिस्टम उन्हें

बांटता है। वो यह हरगिज नहीं मानते कि हर इंसान समान है। इसकी वजह से वो आपस में बंटे और दूसरे धर्मों में भी गए। कई हिन्दुओं ने अपना अलग धर्म चलाया। जैसे सिख, जैन, बुद्ध और कई लोगों ने ईसाई और इस्लाम धर्म अपनाए। परिणामतः भारतीय एक-दूसरे पर विास नहीं करते। भारत में कोई भारतीय नहीं है, वो हिन्दू, ईसाई, मुस्लिम आदि हैं। भारतीय भूल चुके हैं कि 1400 साल पहले वो एक ही धर्म के थे। इस बंटवारे ने एक बीमार कल्चर को जन्म दिया। यह असमानता एक भ्रष्ट समाज में परिणित हुई, जिसमें हर भारतीय दूसरे भारतीय के विरुद्ध है, सिवाय भगवान के जो उनके विास में खुद रिश्वतखोर है।

Live
हिन्दुस्तान
.com

Date: 01-11-17

प्रदूषित हवा के खिलाफ कदम

प्रार्थना बोरा, भारत प्रमुख, क्लीन एयर एशिया

विश्व मौसम विज्ञान संगठन (डब्ल्यूएमओ) की ताजा रिपोर्ट बताती है कि 2016 के अंत में पृथ्वी के वातावरण में कार्बन डाई-ऑक्साइड के अनुपात में रिकॉर्ड वृद्धि हुई। 2015 में यह वृद्धि पिछले दस वर्षों के औसत वृद्धि अनुपात से लगभग 50 फीसदी ज्यादा दर्ज हुई थी। एक अन्य रिपोर्ट संयुक्त राष्ट्र की भी है, जो और भयावह निष्कर्ष पर पहुंचती है। इस रिपोर्ट के अनुसार, साल 2016 में हमारे वातावरण में कार्बन डाई-ऑक्साइड की मात्रा जिस भयावह तरीके से बढ़ी है, वैसा तो पिछले तीस लाख वर्षों में भी नहीं देखा गया। प्रतिष्ठित वैज्ञानिक प्रतिष्ठानों के अध्ययनों के निष्कर्ष हमें ऐसी भयावह तस्वीर दिखा रहे हैं, जिसके बाद माना जा सकता है कि अगली सदी में आते-आते हम बहुत ज्यादा बढ़ चुके तापमान के अभूतपूर्व संकट से जूझ रहे होंगे। दिल्ली में इस साल गरमी का विस्तार अक्टूबर के अंत तक महसूस हुआ, जबकि आमतौर पर यह समय मौसम की नमी से सुहावना और सुखद हो चुका होता है। कुछ हालिया अध्ययन बताते हैं कि तेजी से हो रहे शहरीकरण से हमारा वन क्षेत्र लगातार इस तरह घटा कि कार्बन डाई-ऑक्साइड सोखने की उनकी क्षमता भी उसी अनुपात में कम होती गई। जलवायु परिवर्तन की स्थिति में जैसी तेजी आई है और जैसी अनियोजित-असुरक्षित आर्थिक गतिविधियां हम करते जा रहे हैं, उसने जमीन और महासागरों की कार्बन उत्सर्जन साफ करने की क्षमता को बुरी तरह प्रभावित किया है। ऐसे में, सबसे बड़ी जरूरत कार्बन उत्सर्जन सीमित करने और ऐसी नकारात्मक गतिविधियों को नियंत्रित के प्रति हमारी मजबूत प्रतिबद्धता की है, क्योंकि बिना इसके हम जलवायु परिवर्तन को खतरनाक मोड़ पर ले जाने का रास्ता ही देंगे।

हालांकि 2015 में पेरिस में इस संबंध में पहल हुई और सभी देश जलवायु परिवर्तन के कारकों पर नियंत्रण के लिए प्रतिबद्ध भी दिखे थे, लेकिन बाद में विभिन्न सरकारों के रुख में आई शिथिलता के कारण समझौते की भावना वैसी गति नहीं ले सकी, जैसी दरकार थी। तमाम देश इस दिशा में तयशुदा लक्ष्यों से भटके दिखाई दिए। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण रिपोर्ट के अनुसार, अंतरराष्ट्रीय लक्ष्य और घरेलू प्रतिबद्धताओं के बीच इतना बड़ा अंतर है कि यह पृथ्वी को उस स्तर पर लाकर छोड़ देता है, जहां हम औद्योगिक क्रांति के पहले खड़े थे। यह अत्यंत गंभीर और चिंताजनक स्थिति

है। आज भारत उस जगह पर खड़ा है, जहां यह अपने न्यूनतम कार्बन उत्सर्जन के दृष्टिकोण के साथ स्वच्छ ऊर्जा के महत्वाकांक्षी लक्ष्य की ओर बढ़ सकता है, कार्बन उत्सर्जन नियंत्रित कर अपनी बढ़ती अर्थव्यवस्था की जरूरतों को खाने पानी देने का काम कर सकता है। भारत जलवायु परिवर्तन के खतरों से निपटने की दिशा में अपने प्रयासों के प्रति पहले से वचनबद्ध है। हालांकि कार्बन डाई-ऑक्साइड उत्सर्जन में सबसे आगे माना जाता है, लेकिन यह स्वच्छ ऊर्जा विकास के लक्ष्य के साथ आगे बढ़ सकता है, जो न सिर्फ जलवायु के लिए बेहतर होगा, बल्कि सतत विकास की प्रक्रिया में भी सहायक होगा। पेरिस समझौते के तहत भारत को 2022 के अंत तक, स्थापित सौर ऊर्जा के सौ गीगावाट के प्रारंभिक लक्ष्य के साथ स्वच्छ ऊर्जा विस्तार का लक्ष्य प्राप्त करना है। भारत ने 2030 तक गैर-जीवाश्म ईंधन ऊर्जा के क्षेत्र में भी अपनी हिस्सेदारी 40 प्रतिशत तक बढ़ाने की योजना बनाई है। साथ ही अपना वन आच्छादित क्षेत्र बढ़ाकर कार्बन डाई-ऑक्साइड का स्तर काफी कम करने के लिए भी प्रतिबद्ध है।

भारत के महत्वाकांक्षी लक्ष्यों के पीछे सरकार की दृढ़ इच्छाशक्ति भी है। सरकार ने ऊर्जा दक्षता की दिशा में ऐसे कार्यक्रमों की शुरुआत की है, जो यह सुनिश्चित करेंगे कि 2030 तक आकार लेने वाला भारत का अधिकांश बुनियादी ढांचा टिकाऊ और स्थायित्वपूर्ण हो। भारत ने जिस तरह अक्षय ऊर्जा पर अपना ध्यान केंद्रित किया है, वह कार्बन उत्सर्जन घटाने की इसकी प्रतिबद्धता और नीति का मुख्य आधार बनेगा। भारत ने राष्ट्रीय सौर ऊर्जा मिशन का भी विस्तार किया है और इसमें 2022 तक स्थापित सौर ऊर्जा क्षमता के सौ गीगावाट का लक्ष्य है। भारत में सौर ऊर्जा तेजी से सस्ती हो रही है। इस साल मई तक भारत के पास नौ गीगावाट सौर ऊर्जा उत्पादन की क्षमता थी, जो अब पवन ऊर्जा के क्षेत्र में विश्व का चौथा सबसे बड़ा उत्पादक देश बन चुका है। इसने कुछ कोयला प्लांट रद्द करने की योजना भी तैयार की है, जो न सिर्फ इसे अपनी प्रतिबद्धता पूरी करने का अवसर देंगे, बल्कि पेरिस समझौते के तयशुदा की अपेक्षा ज्यादा लक्ष्य प्राप्त करने में सहायक होगा। हालांकि भारत अपनी ऊर्जा नीति को लगातार ईंधन तो दे ही रहा है, अपनी ईंधन नीति को भी दीर्घकालिक सफलता के लिए नए लक्ष्य देकर तैयार कर रहा है। 2014 में ही इसने हल्के वाहन की ईंधन दक्षता मानकों के अपने पहले प्रयोग को अंतिम रूप दे दिया था, जो अप्रैल 2017 में लागू भी हो गया। नए वाहनों की ईंधन दक्षता निर्धारित करने का यह महत्वपूर्ण प्रयोग था। भारत सरकार ने राष्ट्रीय इलेक्ट्रिक मिशन मोबिलिटी योजना 2020 की स्थापना 2013 में ही कर दी थी। इसके तहत भारी उद्योग विभाग ने इलेक्ट्रिक वाहन निर्माण की दिशा में महत्वाकांक्षी योजना की शुरुआत की। इस योजना का मकसद हाइब्रिड-इलेक्ट्रिक वाहन के बाजार को बढ़ावा देना है, जिसके अंतर्गत 2020 तक प्रति वर्ष छह-सात लाख वाहन तैयार करने का लक्ष्य है।

भारत सरकार ने 2010 में कोयला उपयोग पर टैक्स लगाया था, जिसका एक मकसद कोयला आधारित ऊर्जा (तापीय ऊर्जा) को हतोत्साहित करना भी था। इसी टैक्स को अब स्वच्छ पर्यावरण सेस का नाम दिया गया, और जिसे बढ़ाकर अब चार सौ रुपये प्रति टन कर दिया गया है। इससे आने वाली राशि राष्ट्रीय स्वच्छ पर्यावरण कोष में जाती है, जो अक्षय ऊर्जा परियोजनाओं को वित्तीय सहायता प्रदान करता है। अब जब अंतरराष्ट्रीय रिपोर्टें बता रही हैं कि बाकी सब जगह से वातावरण में कार्बन डाई-ऑक्साइड बढ़ने की ही खबरें हैं, तब भारत इस दिशा में वृद्धि दर कम होता दिखा रहा है। भारत में ऊर्जा, परिवहन व जंगल जैसे क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन के बारे में सोचने वाली अंतरविभागीय नीतियों के सहारे बड़ा काम करके जलवायु परिवर्तन की दिशा में सकारात्मक नतीजे देने के पर्याप्त अवसर हैं। अपने इन्हीं तत्वों से सहारे यह लोगों के स्वास्थ्य और कल्याण की दिशा में एक नेतृत्वकारी भूमिका में उभर रहा है।

Date:01-11-17

चीन का जलयुद्ध

सोमवार को हांगकांग के अखबार साउथ चाइना मॉर्निंग पोस्ट में छपी एक खबर इस समय पूरे भारत के लिए चिंता का कारण बनी हुई है। इस खबर के अनुसार, चीन तिब्बत में बहने वाली सांगपो नदी से एक हजार किलोमीटर लंबी एक सुरंग बनाएगा, जो सांगपो के पानी को शिनजियांग प्रांत के रेगिस्तान तक पहुंचाएगी। अखबार ने इस सुरंग की परिकल्पना को चीनी इंजीनियरों के कमाल के रूप में पेश किया है। खबर में यह भी कहा गया है कि जब इसका पानी शिनजियांग के रेगिस्तान में पहुंचेगा, तो वह कैलिफोर्निया की तरह लहलहा उठेगा। सांगपो तिब्बत के पठार में मानसरोवर झील से निकलने वाली वह नदी है, जिसे हम भारत में ब्रह्मपुत्र कहते हैं। यह नदी भारत और बांग्लादेश के एक बड़े हिस्से की जीवन रेखा है। अगर इसका रुख मोड़ा गया, तो भारत की सबसे चौड़े पाट वाली नदी ब्रह्मपुत्र के सूखने का खतरा खड़ा हो जाएगा। साथ ही वह संस्कृति भी खतरे में पड़ जाएगी, जो इस पानी के आस-पास विकसित होकर फल-फूल रही है। वैसे ऐसी खबरें पहले भी आती रही हैं कि चीन कई बांध बनाकर भारत की तरफ होने वाले जल के प्रवाह को रोकना चाहता है।

तब चीन का तर्क था कि वह ब्रह्मपुत्र पर कोई बांध नहीं बना रहा, हां उसकी कुछ सहायक नदियों पर बांध जरूर बना रहा है। लेकिन ताजा खबर सीधे-सीधे यही कहती है कि सांगपो नदी का पानी शिनजियांग के रेगिस्तान में भेजा जाएगा। हालांकि चीन सरकार के प्रवक्ता ने अगले ही दिन इस पूरी खबर का खंडन कर दिया, लेकिन अखबार में जिस विस्तार से यह खबर छपी है, इसे तुरंत ही खारिज भी नहीं किया जा सकता। संभव है कि चीन अभी इसका खुलासा न करना चाहता हो। वैसे अखबार के हिसाब से भी चीन की यह भावी योजना है और दुनिया की यह सबसे लंबी सुरंग बनाने से पहले इंजीनियर एक कम लंबी सुरंग का प्रयोग कर रहे हैं।

चीन के साथ यह ताजा आशंका डोका ला विवाद के तुरंत बाद खड़ी हुई है, इसलिए इसे भारत पर दबाव बनाने की कोशिश के रूप में भी देखा जाएगा। वैसे भी, यह कहा जाता है कि भारत और चीन धीरे-धीरे जलयुद्ध की ओर बढ़ रहे हैं। चीन को लगता है कि यही अकेला मुद्दा है, जिससे वह भारत पर भारी पड़ सकता है। भारत ही नहीं, एशिया के बहुत सारे देश तिब्बत से निकलने वाली जलधाराओं पर निर्भर करते हैं। वियतनाम और लाओस जैसे देश भी इसे लेकर चीन की शिकायत करते रहे हैं। यह भी कहा जाता है कि चीन नदियों की अंतरराष्ट्रीय संधियों की परवाह नहीं करता। चीन की एक अन्य दिक्कत यह भी है कि उसने पर्यावरण की परवाह कभी नहीं की और उसे होने वाले नुकसान को हमेशा नजरंदाज किया है। यही वजह है कि पर्यावरण प्रदूषण के मामले में चीन बहुत आगे चला गया है। इसे कम करने के लिए वह प्राकृतिक तरीके अपनाने की बजाय कृत्रिम बारिश जैसी चीजें आजमा रहा है। जाहिर है कि चीन इसकी कीमत भी चुका रहा है। एक समय था, जब चीन के बारे में भूशास्त्री यह बताते थे कि वहां 50 हजार से भी ज्यादा नदियां हैं। कुछ समय पहले चीन सरकार ने जो अधिकृत आंकड़ा जारी किया, उसके हिसाब से वहां 22,909 नदियां हैं। आधे से ज्यादा नदियां कहां गायब हो गईं, यह अभी भी एक पहेली है। आबादी और विकास के साथ ही चीन की बिजली व पानी की जरूरतें बढ़ रही हैं, इसलिए वह नदियों पर बांध बनाने और उनका रुख मोड़ने का काम बड़े पैमाने पर कर रहा है। लेकिन यह चीन का अपना मामला है। जबकि पानी के मसले पर भारत को राजनयिक स्तर पर अपने हक की लड़ाई लड़नी होगी, और अपने जैसे देशों को भी साथ लेना होगा।



Date: 01-11-17

A duty to be tolerant

The rise of intolerance is alarming. Dissent is smothered and self-censorship takes its place, endangering democracy itself.

Soli J. Sorabjee

On January 26, 1950, India became a sovereign democratic republic. Its Constitution guaranteed a wide array of fundamental rights which were also made justiceable. The Constitution originally did not make any specific provision for duties of citizens. However, on analysis, duties are implicit because the Constitution permits reasonable restrictions on exercise of fundamental rights in public interest, which is on the premise that exercise of fundamental rights entails duties. The co-relation between rights and duties has been recognised by our ancient rishis and in our sacred texts. The Bhagavad Gita teaches us that "Your duty is your right". Gandhiji summed up the matter admirably: "I learned from my illiterate but wise mother that all rights to be deserved and preserved come from duty well done". According to Walter Lippman, the renowned American political commentator, "For every right that you cherish you have a duty which you must fulfil".

The Universal Declaration of Human Rights 1948 (UDHR) recognises the vital link between human rights and duties in Article 29 of the Declaration which states, "Everyone has duties to the community in which alone the free and full development of his personality is possible". The American Declaration of the Rights and Duties of Man of May 2, 1948 prescribes in Chapter 1 Rights and in Chapter 2 prescribes Duties. It is interesting that one of the duties prescribed is "the duty to pay taxes". The African Charter on Human and Peoples Rights of June 26, 1981 prescribes along with guaranteed rights some duties, one of which is "every individual shall have duties towards his family and society, the State and other legally recognised communities and the international community". Again it is curious that Article 29(6) prescribes the duty "to pay taxes imposed by law in the interest of the society". This duty regrettably is not generally performed in our country.

It was in 1976 during the June 1975 Emergency that a specific Chapter IV-A was incorporated in the Constitution and Article 51-A was enacted which lists certain duties to be performed by a citizen. Unfortunately, because of its timing, this was initially viewed with the suspicion that it was an attempt to curtail fundamental rights by way of enactment of the fundamental duties listed in Article 51-A. These misgivings were misplaced. A dispassionate reading of Article 51-A reveals that the basic premise underlying Article 51-A is that freedom without acceptance of responsibility can destroy the freedom itself, whereas when rights and responsibilities are balanced, freedom is enhanced and a better world order can be created.

Are fundamental duties enforceable? The Supreme Court in its decision in *AIIMS Students' Union v. AIIMS* ruled that though "Article 51-A does not expressly cast any fundamental duty on the State, the fact

remains that the duty of every citizen of India is the collective duty of the State". Let us face the painful reality that one cannot effectively exercise fundamental rights nor perform fundamental duties unless tolerance is prevalent in society. Tolerance is not merely a goody goody virtue. It enjoins a positive attitude which permits and protects not only expression of thoughts and ideas which are accepted and are acceptable but which also accords freedom to the thought we hate.

Tolerance is desirable, nay essential, because it recognises that there can be more than one path for the attainment of truth and salvation. A tolerant society protects the right to dissent. If there is pervasive intolerance the inevitable consequence will be violence and that would ultimately pose a serious threat to our democracy. Intolerance has a chilling, inhibiting effect on freedom of thought and expression. Development and progress in any field of human endeavour are not possible if tolerance is lacking. We know how Galileo suffered for his theory that the sun was the centre of our solar system and not the earth. Darwin was also a victim of intolerance and was lampooned and considered as an enemy of religion for his seminal work, *The Origin of Species*. Nearer home we have the example of Raja Ram Mohan Roy whose efforts for reform in the Hindu religion, especially for the abolition of Sati, evoked virulent opposition because of menacing intolerance. We must ensure that we do not revert to those dark days. In its celebrated judgment in *S. Rangarajan vs P. Jagjivan Ram*, the Supreme Court emphasised that "we must practice tolerance to the views of others. Intolerance is as much dangerous to democracy as to the person himself."

At present the rise of intolerance is alarming. Even a moderate expression of a different point of view is viewed with resentment and hostility and there are vociferous demands for bans. The consequence is that dissent is smothered and self-censorship inevitably takes place. Healthy and vigorous debate is no longer possible. And when that happens democracy is under siege. Therefore it is of the utmost importance to include the practice of tolerance as a fundamental duty in Article 51-A. The problem is that tolerance cannot be legislated. Hence, we must develop the capacity for tolerance by fostering an environment of tolerance, a culture of tolerance.

The Press and news channels have an important role to play in this. They should incessantly preach the message that no group or body has the monopoly of truth and wisdom and we must respect the point of view of the "other minded". The Press must unequivocally condemn instances of intolerance without fear of adverse consequences. There should be no dereliction of this duty or practice of tolerance. If this duty is conscientiously performed it would result in a salutary change in our society and also bring about understanding and harmony in relations between the peoples of our vast country. Is this utopian? Maybe. But remember that progress is the realisation of utopias.

Date: 01-11-17

Facing storm tides

For India, the passage through Chabahar is full of possibilities — and challenges

The passage of the first consignment of Indian cargo to Afghanistan through Chabahar has made headlines - but hopes that the port will transform India's relationship with central Asia are facing a rising storm tide. The shipment, part of the 1.1 million tonnes of wheat India has promised to supply free to

Afghanistan's war-torn people, will bring relief to tens of thousands. However, the shipment has also underlined how far we are from realising the larger project of which the port is just a part. In May 2016, Afghanistan, India and Iran had signed an agreement establishing an international transport and trade corridor. For Afghanistan, it offered escape from the chokehold which Pakistan exercises over its external trade, now overwhelmingly dependent on Karachi port. For India, the port had even larger significance. Iran's commitment to link Chabahar to its rail network held out the promise of Indian overland access to central Asia, Russia and even Europe. The 2016 agreement envisaged India would, inside 18 months, spend \$85 million to upgrade the port's capacity from 2.5 million tonnes a year to 8 million tonnes. In addition, India offered \$400 million worth of steel to build a railway line from Chabahar to Zahedan, linking the port to Iran's railway network. Iran was, finally, offered a \$150 million credit line.

Yet, more than a year on, there are signs the whole project could unravel - largely because of the US. Earlier this month, President Donald Trump announced he intended to walk out of the Iran nuclear deal, in which Tehran promised to roll back its nuclear-weapons capabilities in return for an end to Western sanctions. Should Trump deliver on his threat, European and even Indian private-sector firms will be reluctant to participate in the project, for fear of attracting US sanctions. Work on the port upgrade is yet to begin, largely because European suppliers have been uncertain about the risks of working in Iran. Worse, the volume of trade the project is premised on will not be realised. Indian trade with Afghanistan is unlikely to sustain Chabahar; war in the country means its mineral resources are impossible to tap in the foreseeable future. Faced with this looming crisis, Iran is already turning to China, handing it oil and gas concessions New Delhi had hoped to win in return for its Chabahar investment. India needs to find a way to address this challenge, or risk seeing its regional strategy unravel.
